बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 81

हुआवेई पर सवाल

अमेरिका सरकार ने अपने देश से संचालित कंपनियों के हुआवेई (तथा कई अन्य चीनी कंपनियों) के साथ कारोबार करने पर प्रतिबंध लगा दिया है। इसका वैश्विक दूरसंचार बाजार तथा मोबाइल हैंडसेट बाजार पर दूरगामी असर होगा। यह प्रतिबंध भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा के लिहाज से भी दिक्कतदेह निहितार्थ समेटे हुए है। निजी क्षेत्र की यह चीनी बहुराष्ट्रीय कंपनी दुनिया की सबसे बड़ी दूरसंचार नेटवर्क उपकरण प्रदाता और दूसरी सबसे बड़ी हैंडसेट निर्माता कंपनी भी है। वर्ष 2018 में कंपनी का राजस्व 10,500 करोड़ डॉलर से अधिक था। इस प्रतिबंध में 90 दिन की अस्थायी छूट दी गई है ताकि अमेरिका में नेटवर्क बाधित न हो। परंतु गूगल जो ऐंड्रॉयड ऑपरेटिंग सिस्टम और गूगल प्ले स्टोर चलाती है, वह पहले ही हुआवेई से रिश्ते समाप्त कर चुकी है। इसी तरह अन्य अमेरिकी कंपनियों मसलन इंटेल, क्वालकॉम, सिस्को आदि ने भी उससे नाता तोड़ लिया है। ये कंपनियां चीन की कंपनियों को कलपुर्जे मुहैया कराती हैं। वैश्विक स्मार्ट फोन बाजार में ऐंड्रॉयड का हिस्सा 90 प्रतिशत है। भारत में इसकी हिस्सेदारी इससे भी अधिक है। वर्ष 2018 में हुआवेई ने हुआवेई और ऑनर ब्रांड समेत कुल 20 करोड़ से अधिक मोबाइल बेचे। ये सारे फोन ऐंड्रॉयड हैं। अगर हुआवेई कोई वैकल्पिक ऑपरेटिंग सिस्टम नहीं बनाती और उपभोक्ताओं को उसका इस्तेमाल करने के लिए मना नहीं लेती तो उसे बहुत नुकसान होगा।

ज्यादा महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हुआवेई दुनिया में दूरसंचार नेटवर्क उपकरण की आपूर्ति करने वाली सबसे बड़ी कंपनी है। इंटेल, क्वालकॉम, सिस्को तथा अन्य अमेरिकी कंपनियों के कारोबारी रिश्ते खत्म करने के कारण हुआवेई की आपूर्ति श्रृंखला पर बुरा असर होगा। एक बार उसकी इन्वेंटरी समाप्त होने के बाद मौजूदा नेटवर्क में सुधार कार्य और रखरखाव मुश्किल हो जाएगा। नई बुनियादी संरचना कायम करना और कठिन होगा क्योंकि हुआवेई को प्रमुख घटकों के लिए वैकल्पिक स्रोत तलाश करने होंगे। ये घटक बौद्धिक संपदा अधिकार के तहत संरक्षित हैं। देश में तथा अन्य स्थानों पर जो नीति निर्माता 5जी सेवा के लिए हुआवेई की आपूर्ति पर निर्भर हैं, उन्हें भी भविष्य की दिक्कतों पर विचार करना चाहिए। अन्य नेटवर्क उपकरण आपूर्तिकर्ता मसलन एरिक्सन और नोकिया छोटे और महंगे हैं। वे हुआवेई का मुकाबला नहीं कर सकते।

प्रतिबंध के लिए जो वजह बताई गई है वह और अधिक बेचैन करने वाली है। अमेरिकी सुरक्षा प्रतिष्ठान का मानना है कि हुआवेई के चीन की सेना के साथ गहरे ताल्लुकात हैं। आरोप है कि हुआवेई के उपकरण नेटवर्क की संवेदनशील जानकारी चीन की एजेंसियों तक पहुंचा सकते हैं। चिंता यह भी है कि चीन के साथ विवाद की स्थिति में नेटवर्क को जानबूझकर बाधित किया जा सकता है। छह अमेरिकी सुरक्षा एजेंसियों ने सार्वजनिक वक्तव्य जारी करके अमेरिकी नागरिकों से हुआवेई तथा जेडटीई जैसे चीनी ब्रांड के फोन इस्तेमाल न करने को कहा है। असुरक्षित नेटवर्क ढांचे को लेकर भी अमेरिकी सुरक्षा एजेंसियां बार-बार चिंता जताती रही हैं। दूसरी सोच यह भी है कि अमेरिका हुआवेई का इस्तेमाल चीन के साथ चल रही व्यापारिक जंग में लाभ लेने के लिए कर रहा है। इसकी पुष्टि कर पाना मुश्किल है। चीन के साथ भारत के रिश्ते बहुत सुदृढ़ नहीं हैं। ऐसे में यह प्रतिबंध और इसके लिए दी गई वजहें इस बात के लिए पर्याप्त हैं कि नीति निर्माता 5जी वेंडर के रूप में हुआवेई के दर्जे की समीक्षा करें। नीति निर्माताओं और उपभोक्ताओं को यह यकीन दिलाया जाना चाहिए कि देश की 5जी सेवाएं समय पर शुरू होंगी। 5जी नेटवर्क के भविष्य की सुरक्षा को लेकर कोई समझौता नहीं होना चाहिए। हुआवेई से कहा जाना चाहिए कि वह इन चिंताओं को दूर करे।

अजय मोहंती

चुनाव परिणाम और शेयर कीमत अनुमान

देश के चुनाव नतीजों का विभिन्न कंपनियों के शेयरों की कीमत पर कैसे और क्या असर होता है। इस बारे में विस्तार से अपनी राय रख रहे हैं **अजय शाह**

हमने अतीत में भी देखा है कि चुनाव को देखते हुए शेयर कीमतों में कैसे उतार-चढ़ाव आता है। परंतु मोटे तौर पर भविष्य में मुनाफे में बढ़ोतरी को लेकर बाजार का पूर्वानुमान प्राय: गलत ही साबित हुआ है। यह एक व्यापक रुझान का हिस्सा है जहां भारतीय शेयर बाजार अक्सर एक समय एक कंपनी पर केंद्रित दिखते हैं लेकिन उनमें उन व्यापक ताकतों की समझ नहीं दिखती है जो समूचे देश को आकार दे रहे होते हैं और तमाम कंपनियों को प्रभावित करते हैं। वित्तीय क्षेत्र के कारोबारियों को वृहद अर्थव्यवस्था और राजनीति विज्ञान की समझ होनी आवश्यक है। चुनाव नतीजे राजनीतिक संपर्क वाली कंपनियों के लिए भी काफी महत्त्वपूर्ण हो सकते हैं।

वर्ष 2004 में हर किसी को यह लग रहा था कि राजग की सरकार दोबारा बनेगी लेकिन संप्रग को जीत मिली। माकपा जो संप्रग का हिस्सा थी, उसने टेलीविजन पर वादा किया कि सरकारी कंपनियों का निजीकरण नहीं किया जाएगा। 17 मई, 2004 को नैशनल स्टॉक एक्सचेंज के सूचकांक निफ्टी में एक दिन की सबसे बड़ी गिरावट देखने को मिली। इस बात ने एक्सचेंज के प्रबंधकों को भी धक्का पहुंचाया।

परंतु यह तात्कालिक आकलन गलत साबित हुआ। हमने तमाम सूचीबद्ध कंपनियों के शुद्ध लाभ का आकलन करके एक सूचकांक तैयार किया। इसमें तेल और वित्त जगत की कंपनियों को शामिल नहीं किया गया। इनका प्रदर्शन संप्रग के पहले कार्यकाल में काफी अच्छा था।

वर्ष 2009 में चुनाव नतीजे आए तो शेयर बाजार काफी प्रसन्न था। भविष्य में मुनाफे में बढ़ोतरी के आसार नजर आ रहे थे। परंतु आगे चलकर यह अनुमान गलत हुआ। शुद्ध मुनाफे का सूचकांक 2009 की दूसरी तिमाही के 808 से बढ़कर 2014 की दूसरी तिमाही में 954 हो गया था। अगर मुद्रास्फीति को हटाकर देखे तो शुद्ध मुनाफे में गिरावट आई थी। वर्ष 2013 के बाद से शेयर बाजार इस बात को लेकर आशावादी था कि सरकार में बदलाव आएगा और वृद्धि में तेजी की दर वापस आएगी। हमें नहीं पता कि 2019 की दूसरी तिमाही में शुद्ध मुनाफा सूचकांक क्या होगा। 2018 की चौथी तिमाही के आंकड़े इस संबंध में अद्यतन हैं और वे 875 पर हैं। जब दूसरी तिमाही के नतीजे आ जाएंगे तब लगता नहीं कि पांच वर्ष के परिदृश्य में मजबूत मुनाफा वृद्धि नजर आएगी।

उपरोक्त अनुभव बताते हैं कि भारतीय शेयर बाजार चुनावी नतीजों को लेकर आने वाली सूचनाओं का सही प्रसंस्करण नहीं कर पाते और न ही वे शुद्ध मुनाफे पर पड़ने वाले असर को भांप पाते हैं। हमें इस बात को लेकर सतर्क रहना चाहिए कि 23 मई को आने वाले नतीजों को शेयर बाजार कैसे समझेंगे। यह भारतीय शेयर बाजार द्वारा कमजोर वृहद आर्थिक पूर्वानुमानों की लंबी कड़ी का हिस्सा है। जब हम बाजार के मूल्य आय अनुपात से जुड़े बड़े कदमों को देखते हैं तो पता चलता है कि शुद्ध मुनाफे से जुड़े बड़े कदमों का अनुमान लगाने में प्रदर्शन कमजोर रहा है। देश में 2002 से 2008 के बीच आय में तेज वृद्धि देखने को मिली। व्यापक तौर पर देखें तो मूल्य आय अनुपात में सुधार मुनाफे में इस वृद्धि के बाद ही हुआ। बाजार आने वाले दिनों का अनुमान लगाने में नाकाम रहा। बाद में काफी समय तक मूल्य आय अनुपात ऊंचा बना रहा और अनुमान लगाया गया कि भविष्य में मुनाफा सुधरेगा लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ।

भारतीय शेयर बाजार का प्रदर्शन तब बेहतर होता है जब वह एक वक्त में एक ही कंपनी पर ध्यान दे। जब सैकड़ों कंपनियों का औसत निकाला जाता है तो उच्च मूल्य आय अनुपात वाली कंपनी के भविष्य में अधिक मुनाफा कमाने का अनुमान होता है। परंतु वृहद आर्थिक स्थिति और राजनीतिक पूर्वानुमान के क्षेत्र में ऐसा देखने को नहीं मिला है।

वृहद से सूक्ष्म की बात करें तो चुनाव नतीजों का निजी स्तर पर कंपनियों पर क्या असर हो सकता है? राजनीतिक दलों और कुछ कंपनियों के बीच आपसी संबंध हो सकता है। जब संस्थान कमजोर होते हैं तो व्यक्तित्व हावी होते हैं। चुनिंदा लोगों और कंपनियों के कुछ राजनेताओं से मजबूत रिश्ते हो सकते हैं। लाइसेंसिंग, नियम बनाने और प्रवर्तन संबंधी गतिविधियों में चुनाव नतीजों के चलते बदलाव आ सकता है। खासतौर पर ऐसी श्रेणी की कंपनियों के मामले में जिन्हें राजनीतिक संपर्क वाला माना जाता हो। भारत में इन मुद्दों को लेकर बहुत सीमित जानकारी है। परंतु कुछ अन्य देशों में इस विषय पर अध्ययन हुए हैं जो जानकारीपरक हैं।

■ एक पर्चा (मुबारक ऐंड पूर्वासरी, 2006) का एक पर्चा बताता है कि इंडोनेशिया में जो कंपनियां सुहार्तो के शासन से जुड़ी हुई थीं उनको आयात लाइसेंस प्राथमिकता पर मिलता था।

■ पाकिस्तान से संबंधित एक पर्चा (ख्वाजा ऐंड मियां, 2005) ने पाया कि पूर्व राजनेताओं ने उनसे जुड़ी कंपनियों को बैंक ऋण दिलाए।

■ एक अन्य पर्चा (फैसियो ऐंड पार्सली, 2009) ने पाया कि जब कोई राजनेता मरता है तो उस राजनेता के गृहनगर में मुख्यालय वाली कंपनियों के शेयरों की कीमतों में 1.7 फीसदी की गिरावट आती है। यह तीव्र आकलन सही है क्योंकि आय वृद्धि और ऋण तक पहुंच पर निधन के बाद विपरीत असर होता है।

■ एक अन्य पर्चे (क्लासेंस एवं अन्य) के मुताबिक जो ब्राजीली कंपनियां चुनावी फंडिंग में शामिल रहीं उन्हें सन 1998 और 2002 के चुनावों के समय शेयर बाजार में बेहतर प्रतिफल मिला।

■ इंडोनेशिया (फिशमैन 2001) में सुहार्तो के खराब स्वास्थ्य की अटकलों ने राजनेताओं से जुड़ी कंपनियों के प्रतिफल पर नकारात्मक असर डाला।

■ सन 1933 में जब हिटलर सत्ता में आया तो नाजियों के साथ मजबूत रिश्तों वाली कंपनियों का प्रतिफल सुधरा (फर्गुसन ऐंड वोथ 2008)।

■ मलेशिया में जब सरकार के पास ऐसी कंपनियों को सब्सिडी देने के लिए धन नहीं बचा तो सन 1997 के संकट के समय इन कंपनियों का प्रतिफल नकारात्मक हो गया (जॉनसन ऐंड मिट्टन, 2003)।

ये उदाहरण आने वाले दिनों में शेयर कीमतों के रुख को समझने में हमारी सहायता कर सकते हैं। सैकड़ों कंपनियों का औसत निकाला जाए तो भारतीय शेयर बाजार में कंपनियों का मूल्यांकन सही है। औसतन कम मूल्य आय अनुपात वाली कंपनियों के मुनाफे में कम वृद्धि होती है। मौजूदा दौर में ऐसी फर्म के राजनीतिक संपर्कों पर और अधिक विचार करने की आवश्यकता है। भारतीय शेयर बाजार सूचीबद्ध कंपनियों की समेकित आय वृद्धि का आकलन करने में कमजोर है। उभरते बाजारों में समग्र सूचकांक अपेक्षाकृत महत्त्वपूर्ण कारक है। वे व्यक्तिगत फर्म और पोर्टफोलियो को आकार देने में अहम भूमिका निभाते हैं। इससे समग्र सूचकांक मूल्यांकन को लेकर सही सोच का महत्त्व बढ़ता है।

वृहद अनुमान ऐसा क्षेत्र है जहां और अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है। देश के वित्तीय समुदाय को वृहद अर्थव्यवस्था और राजनीति विज्ञान के क्षेत्र में अपनी क्षमताओं को बढ़ाना होगा।

भारतीय राज्य के स्वरूप में सुधार को देनी होगी तवज्जो

सम सामयिक

टीसीए श्रीनिवास-राघवन

इस महीने के अंत तक देश में नई सरकार बन चुकी होगी। सरकार चाहे जिस सियासी गठजोड़ की बने, उसे तीन बुनियादी मुद्दों का सामना करना होगा। इसकी वजह यह है कि नई सरकार की अवधि पूरी होने तक 21वीं सदी का करीब चौथाई काल पूरा हो चुका होगा।

पहला मुद्दा 21वीं सदी में भारतीय राज्य के स्वरूप एवं आकार से जुड़ा हुआ है। सवाल है कि यह कितना अधिक प्रतिरोधी होगा या एक व्यवहार्य इकाई के रूप में अस्तित्व बनाए रखने के लिए उसे ऐसा करना होगा? दूसरा मुद्दा भारतीय अर्थव्यवस्था के स्वरूप एवं ढांचे का है। यह भारतीय राज्य से कितना आजाद होगा? हम देखेंगे कि यह मसला पहले सवाल से गहराई से जुड़ा हुआ है।

तीसरा सवाल समग्र राजनीतिक परिपाटी से जुड़ा है। 'अलग-अलग लटकाने से बेहतर समूह में लटकना होता है' सिद्धांत का अनुसरण करें तो भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) और कांग्रेस के विकल्प के रूप में उभर रहे क्षेत्रीय एवं छोटे दलों को रोकने के लिए क्या दोनों राष्ट्रीय दल एक साथ आएंगे? ऐसा नहीं है कि ऐसा होने की संभावना बहुत कम है, लिहाजा हम अपनी बात सियासी दलों से ही शुरू करते हैं।

मौजूदा चुनाव में भाजपा लोकसभा की कुल 543 सीटों में 437 पर चुनाव लड़ रही है जबकि कांग्रेस ने 423 सीटों पर अपने उम्मीदवार उतारे हैं। इसका मतलब है कि ये दोनों राष्ट्रीय दल खुद ही मान रहे हैं कि करीब 120-125 सीटों पर उनका खास राजनीतिक दखल नहीं है। लेकिन सच तो यह है कि यह आंकड़ा करीब 220 सीटों का है। वर्ष 2004 के आम चुनाव में भाजपा और कांग्रेस दोनों दलों को मिलकर केवल 282 सीटें मिली थीं। वर्ष 2009 के चुनाव में भाजपा एवं कांग्रेस ने मिलकर 322 सीटें जीती थीं जबकि 2014 में यह आंकड़ा बढ़कर 326 हो गया था और बाकी सीटें अन्य दलों के खाते में गई थीं। दोनों राष्ट्रीय दलों की सीटें कमोबेश इसी दायरे में रही हैं।

सवाल है कि क्या भाजपा-विरोधी एवं कांग्रेस-विरोधी रुझान में तेजी आई है? अगर ऐसा है तो भाजपा और कांग्रेस को एक साथ आने की जरूरत पड़ सकती है। अगले दशक में यह सबसे बड़ी राजनीतिक परिघटना हो सकती है। लेकिन इस संभावना को आकार देने के लिए जरूरी होगा कि भाजपा हिंदुत्व से पीछे हटे। उसी तरह कांग्रेस को भी गांधी परिवार के नेतृत्व को अलविदा कहना होगा।

अर्थव्यवस्था

लेकिन केवल राजनीतिक दलों के पुनर्संयोजन से ही देश को कोई मदद नहीं मिलेगी। अर्थव्यवस्था को भी काफी मजबूती से बढ़ना होगा। हाल ही में हार्वर्ड में शिक्षित एक भारतीय अर्थशास्त्री ने यह सवाल उठाया कि लोकतंत्र का पूर्ण अभाव होने के बावजूद चीन ने आर्थिक रूप से इतना अच्छा प्रदर्शन कैसे किया है जबकि अपनी तमाम लोकतांत्रिक उपलब्धियों के बावजूद भारत का प्रदर्शन खराब रहा है। उन्होंने चीन के सशक्त राज्य और भारत के कमजोर राज्य को इसका जिम्मेदार बताया है।

हमें इस बात की जानकारी 1967 से ही है। उस समय नोबेल पुरस्कार विजेता गुन्नार मिर्डल ने विनम्रतापूर्वक कहा था कि भारत एक 'नरम' राज्य है। उसके बाद से हम इसे नियतिवादी तरीके से हल्के में लेते रहे हैं। लेकिन अब यह सवाल पूछने का वक्त आ गया है कि राज्य को अपने आर्थिक साध्य हासिल करने के लिए खुद को किस हद तक बाध्यकारी शक्तियों से लैस करना होगा? इतना साफ है कि मौजूदा स्तर नाकाफी है।

जो भी हो, राज्य की बाध्यकारी शक्तियों में खासी कटौती की गई है जिसका नतीजा यह हुआ है कि उत्पादन के सभी घटक या तो बहुत महंगे या अनुपलब्ध या दोनों हो चुके हैं। इन घटकों को सस्ता बनाने के लिए हमें इस पर चर्चा करने की जरूरत है कि क्या भारतीय राज्य को भी दुनिया के पश्चिमी गोलार्द्ध समेत कई देशों की तरह अधिक बाध्यकारी बनाना होगा?

संरचनात्मक, संवैधानिक एवं राजनीतिक विपक्ष को ध्यान में रखें तो एक संतुलन बनाए रखना बेहद मुश्किल चुनौती बनने जा रहा है। इसे अंजाम देने का एक तरीका यह होगा कि संविधान से समवर्ती सूची को हटाकर राज्यों को अधिक स्वायत्तता दे दी जाए। इसके अलावा केंद्रीय सूची से भी कई विषयों को राज्य सूची में लाना होगा। राज्यों को एक तय रकम केंद्र को देनी चाहिए और हर पांच साल पर उस राशि का संशोधन होना चाहिए।

ऐसा करना आसान नहीं होगा लेकिन 21वीं सदी तो अभी शुरू ही हुई है। अगला दशक बेहद बुनियादी किस्म की इन समस्याओं के समाधान तलाशने में लगाया जाना चाहिए।

भारतीय राज्य

कई देशों ने यह महसूस किया है कि राज्य के ढांचे में सुधार करना सबसे कठिन काम है क्योंकि स्वतंत्रता के सिद्धांत का आशय है कि सुधार की सर्वाधिक जरूरत वाले संस्थान खुद ही अपना सुधार कर सकते हैं। संसद, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका के बीच विवाद का यह बहुत पुराना बिंदु रहा है। स्वतंत्रता की इस आत्मघाती व्याख्या को दूर करने के लिए जरूरी है कि राज्य के बाकी दो अंग तीसरे अंग का सुधार करें। इसके बगैर कोई भी सुधार संभव नहीं हो पाएगा।

यही कारण है कि अगली सरकार को यह तरीका ईजाद करना होगा जिससे तीन में से कोई भी दो अंग तीसरे अंग के सुधारों का मसौदा पेश कर सकें। इन सुधारों को अमल में लाना अनिवार्य करना होगा। अगर इसके लिए संविधान में संशोधन भी करने की जरूरत पड़े तो सरकार को उसके लिए काम करना चाहिए। आखिर संविधान में अब तक 100 से अधिक संशोधन किए जा चुके हैं।

कानाफूसी

मोदी ही दावेदार

लगभग सभी एग्जिट पोल में भारतीय जनता पार्टी और राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की जीत की एकतरफा चर्चाओं के बीच केंद्रीय मंत्री और भारतीय जनता पार्टी के वरिष्ठ नेता नितिन गडकरी ने नागपुर में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के बायोपिक पीएम नरेंद्र मोदी का पोस्टर जारी किया। गडकरी स्वयं नागपुर संसदीय क्षेत्र से प्रत्याशी हैं। उन्होंने कहा कि ये नतीजे अंतिम नहीं बल्कि केवल इस बात के संकेतक हैं कि उनकी पार्टी दोबारा सत्ता में आ रही है। प्रधानमंत्री पद पर अपनी दावेदारी के बारे में उन्होंने कहा कि वह 50 दफा कह चुके हैं कि पार्टी ने मोदीजी के नेतृत्व में चुनाव लड़ा है और वही दोबारा प्रधानमंत्री बनेंगे। उन्होंने कहा कि देश के लोग एक बार फिर भाजपा और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का समर्थन कर रहे हैं। वे पार्टी के पांच साल के काम की भी सराहना कर रहे हैं। गौरतलब है कि प्रधानमंत्री मोदी का बायोपिक आगामी 24 मई को रिलीज की जानी है।

जागरूक मध्य प्रदेश

देश के राजनीतिक भविष्य के निर्धारण में मध्य प्रदेश की अहम भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता है। हालिया आम चुनाव में यह देखने को भी मिला। इन चुनावों में मतदान की बात करें तो मध्य प्रदेश सर्वाधिक जागरूक प्रदेश के रूप में उभरा है। यह जागरूकता मत प्रतिशत में देखने को मिली है। 2014 के पिछले आम चुनाव में जहां प्रदेश में 61 फीसदी मतदान हुआ था, वहीं इस बार यह आंकड़ा 71 फीसदी का स्तर पार कर गया। रविवार को अंतिम दौर के मतदान में ही 75 फीसदी से अधिक मतदाताओं ने शिरकत की। आंध्र प्रदेश भी पीछे नहीं रहा और पिछले चुनाव की तुलना में वहां इस बार 8.78 फीसदी अधिक मतदाताओं ने वोट डाले।

आपका पक्ष

डिजिटल तकनीक से बढ़ता खतरा

डिजिटल तकनीक के बिना मानव सभ्यता के वर्तमान एवं भविष्य की कल्पना करना संभव नहीं है। तकनीक ने मानव जीवन को आसान बनाया है तो यह इसे गर्त में ले जाने का कारण भी बना है। आज जिस तरह से आतंकी और अपराधियों द्वारा इसका इस्तेमाल किया जा रहा है यह सुरक्षा की दृष्टि से खतरनाक है। सोशल मीडिया और अन्य के जरिये चरमपंथी समूह अपने हिंसात्मक और अतिवादी विचारों का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं। विभिन्न सरकारी और बड़ी तकनीकी कंपनियां इस समय खतरनाक गतिविधियों पर अंकुश लगाने की कवायद कर रही हैं लेकिन इसके नतीजे संतोषजनक नहीं है। आतंकवाद विश्व के लिए गंभीर समस्या है। पिछले दिनों श्रीलंका और न्यूजीलैंड में जिस तरह से आतंकी घटनाएं हुईं, उसने मजबूर कर दिया है कि इस विषय पर व्यापक एवं ठोस रणनीति

आधुनिकता के दौर में डिजिटल तकनीक के बढ़ते प्रचलन से खतरा भी बढ़ा है

बनाई जाए। इंटरनेट पर सरकारें आंशिक नियंत्रण तो कर पाती हैं लेकिन इसकी व्यापकता, भौगोलिक और प्रशासनिक सीमाओं से बहुत बड़ी है। आतंक का भी चरित्र अंतरराष्ट्रीय हो चुका है। कंपनियां अपनी सेवाओं को बेहतर बनाने के लिए बड़े पैमाने पर निवेश करती हैं। अत: उनसे अपेक्षा है कि वह अपने उपयोगकर्ताओं की सुरक्षा सुनिश्चित करने पर भी खर्च करेंगी। लोकतांत्रिक अधिकारों की आड़ में हिंसा और आतंक को बढ़ावा देने की छूट नहीं दी जा सकती है। जैसा जम्मू कश्मीर में विभिन्न अलगाववादी संगठन करते हैं। आजादी के नाम पर हिंसा करते हैं, और जो सुरक्षा बल उनके हित में कार्य करते हैं वे लोग उनसे ही संघर्ष करते हैं। भारत ने हमेशा आतंक के विरुद्ध किसी भी पहलकदमी में अंतरराष्ट्रीय समुदाय का साथ दिया है। फिर भी अंतरराष्ट्रीय समुदाय से यही उम्मीद की जाएगी कि आतंकवाद की लड़ाई लड़ने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देंगे।

दुर्गेश शर्मा, गोरखपुर

कूड़े का ढेर बन रहा है समूचा विश्व

मनुष्य द्वारा वस्तुओं के बेतहाशा इस्तेमाल से दुनिया भर में कूड़े का ढेर बढ़ता जा रहा है। हम जो सामान खरीदते हैं उसमें से कुछ हिस्सा कचरे के तौर पर निकलता है। ऐसे कचरे का पहाड़ दुनिया भर के लिए एक चुनौती के रूप में उभर रहा है। रीसाइकल के बावजूद इस पर लगाम नहीं लग पा रहा है। कुछ कंपनियों ने क्रैडल टु क्रैडल नामक तरीका निकाला था। इसकी शुरुआत 1970 के दशक में हुई थी। इसके तहत इस नाम से बनी संस्था न्यूनतम कचरा पैदा करके तैयार होने वाले उत्पादों को प्रमाणपत्र देती है। इनमें कालीन, साबुन तथा मकान निर्माण में इस्तेमाल होने वाली लकड़ी के उत्पाद हैं। इसके निर्माण में प्राकृतिक तरीका अपनाया जाता है। विश्व में बहुत सी ऐसी कंपनियां हैं जो लकड़ी का सामान, बल्ब, पेंट और दूसरी वस्तुएं बनाती हैं। ये क्रैडल टु क्रैडल का प्रमाणपत्र हासिल करने की कोशिश करती हैं। फैशन डिजाइन की दुनिया में सबसे अधिक कपड़े की कतरन निकलती है तथा इसे निपटाने के लिए जला दिया जाता है। इससे पर्यावरण को काफी नुकसान पहुंचता है।

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।